बगुले की वेदना

बक तुम हुए विषण्ण खड़े क्यों सरसी तट पर |
बहुत समय से मौन प्रकंपित क्षीण देह धर |
किस विचार में मग्न उतरते जो न नीर में |
कौन नवल वेदना घुसी तब उर सुधीर में || 1

नहीं कान्ति तव शुभ्र हुआ पीताभ वर्ण है |
नयनाभा कुछ न्यून वदन हे खग ! विवर्ण है |
लगते नहीं सरोग नहीं बूढ़े हो वय से |
पीड़ित लगते विहग सघन संताप उदय से || 2

बोला बक जल न्यून सरोवर सीमित अब हैं |
कुछ हैं जीवन हीन विवर्धित कर्दम सब हैं |
घुले हुए विष तत्व मीन क्या बची निरोगी |
जीवन यापन कठिन कान्ति क्यों न्यून न होगी || 3

जीवन का संघर्ष सहय अपवाद नहीं है |
"बको ध्यान " क्या सकल जाति परिवाद नहीं है |
लक्ष्य प्राप्ति हित सघन सुचिर वक की निश्चलता |
नर नें कर दी सिद्ध योग पथ की निर्बलता || 4

हरते जल से मीन मात्र जठराग्नि शमन को |
करते नित साधना नियंत्रित करके मन को |
वसु में रहते नित्य डूबते किन्तु न उसमें |
प्राय: नर डूबता समुत्सुकता वश जिसमें || 5

मनुज सदृश हमको भी करता रस आकर्षित |
निज प्रतिबिम्ब न हमको रहता कभी अदर्शित |
नर होकर सविवेक निमज्जित होता रस में |
हम हरते निज खाद्य सदा करके मन बस में || 6

दिखता हमें स्वरूप मलिन जल में भी भाई |
दर्पण मे भी नहीं दिखे नर को परछाईं |
जीवन अपना पृथक नहीं विस्तृत जीवन से |
सुविदित हमको तथ्य निकलता कभी न मन से | 7

धवल धरें परिधान धाम धन यश के भूखे |
करते है उपदिष्ट ध्यान उर जिनके रूखे |
कहकर बगुला उन्हें करो अपमान न मेरा |
हमने निर्मित किया न अपना कोई डेरा || 8

सित उनके परिधान मलिन करते द्युति मेरी |
उनकी तृषा अशम्य क्षुधा सीमित है मेरी |
कहलाते वे सिद्ध न अब साधन करना है |
ध्यान हमारे लिए किन्तु जीना मरना है || 9

मीनाक्षी हैं भोग्य उन्हें हम मीन तुष्ट हैं |
फिर भी वे हैं पूज्य और हम कंक दुष्ट हैं ?
विटप पत्र कुछ मलिन तात हम से होते हैं |
मानव संस्कृति धर्म अर्थ उनसे खोते हैं | 10

यहाँ बीट तक श्वेत थूक तक रक्तिम उनका |
है प्रशाख आवास धाम विद्रुम युत उनका |
हम सेते हैं अण्ड पालते निज सन्तति को |
वे गिरवाते गर्म साधु की धर आक्रति को || 11

हम समूह में रहकर भी सुख शान्ति युक्त हैं |
सत्ता के संघर्ष वहाँ षडयंत्र युक्त हैं |
हर्षोदित है यहाँ हमारा प्राकृत नर्तन |
वहाँ नृत्य है मात्र गूढ़ माया आवर्तन || 12

यहाँ ध्यान व्यवहार अंग प्रतिदिन जीवन का |
वहाँ ध्यान विस्मरण चिरंतन मोहन मन का |
हम बगुलो की क्रिया प्रकृति प्रेरित स्वधर्म है |
वहाँ प्रकृति के विमुख नियोजित एक कर्म है || 13

मेरी सहज उड़ान ऊध्वगति उनकी कल्पित |
सत्य न इनका ठोस शब्द आश्रित परिजल्पित |
मम आसन है उच्च अलंकृत इनका आसन |
निज अनुशासन लक्ष्य ध्येय इनका जन शासन || 14

हम करते उद्धार मत्स्य का जल से सत्वर |
पीड़ा उसकी क्षणिक छुड़ाते यह जग नश्वर |
ये जिनको जकड़ते सदा उसको बन्धन है |
मुक्ति कहाँ दासत्व अश्रु शोषण क्रंदन है || 15

रहकर भी नित पंक में रहता सदा अपंक |
अत: मनुज से श्रेष्ठ क्या नहीं जगत में कंक | 16

सिख लाएँगे यह कला किन्तु न नर को गूढ़ |
शठ माया कर मनुज को और करेंगे मूढ़ || 17

10-09-2017 **शिव कुमार मिश्र**